National Research Journal of Business Economics
Volume No: 11, Issue No: 2, Year: 2024 (July- December)
PP: 118-127
ISSN No: 2349-2015
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

पर्यावरणीय शासन और न्यायिक सक्रियता: सर्वोच्च एवं उच्च न्यायालयों के निर्णयों का तुलनात्मक अध्ययन

प्रियसी

शोधार्थी, विश्वविद्यालय राजनीति विज्ञान विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

सारांश

भारत में पर्यावरणीय शासन केवल प्रशासनिक नीति का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह संवैधानिक अधिकार, संघीय उत्तरदायित्व, सार्वजनिक स्वास्थ्य, विकास-नीति और न्यायिक नियंत्रण से गहराई से जुड़ा हुआ विषय है। सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों ने पर्यावरण संरक्षण को अनुच्छेद 21 के जीवन-अधिकार, अनुच्छेद 48-क के राज्य-कर्तव्य और अनुच्छेद 51-क(छ) के नागरिक-कर्तव्य से जोड़कर भारतीय पर्यावरणीय न्यायशास्त्र को व्यापक दिशा दी है। प्रस्तुत शोध-पत्र द्वितीयक आँकड़ों, न्यायिक निर्णयों, राष्ट्रीय हरित अधिकरण के आँकड़ों, पर्यावरण मंत्रालय की रिपोर्टों तथा वायु-गुणवत्ता संबंधी उपलब्ध आँकड़ों पर आधारित है। अध्ययन का उद्देश्य यह देखना है कि सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय पर्यावरणीय शासन में किस प्रकार भिन्न किंतु परस्पर-सम्पूरक संस्थागत भूमिका निभाते हैं। विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सर्वोच्च न्यायालय ने सार्वजनिक न्यास सिद्धांत, प्रदूषक-भुगतान सिद्धांत, सावधानी सिद्धांत और सतत विकास को भारतीय विधि का अंग बनाया, जबकि उच्च न्यायालयों ने स्थानीय पर्यावरणीय विवादों, नगर-प्रशासन, नदी-प्रदूषण, वृक्ष-कटाई, भूमि-उपयोग और राज्यीय नियामक विफलताओं पर अधिक प्रत्यक्ष हस्तक्षेप किया। राष्ट्रीय हरित अधिकरण के समेकित आँकड़ों के अनुसार 54,617 मामलों में से 49,002 मामलों का निपटान हो चुका है और 5,615 मामले लंबित हैं; इससे निपटान अनुपात लगभग 89.72 प्रतिशत निकलता है।

मुख्य शब्द: पर्यावरणीय शासन, न्यायिक सक्रियता, सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालय, राष्ट्रीय हरित अधिकरण, सार्वजनिक न्यास सिद्धांत, सतत विकास, अनुच्छेद 21।

1. प्रस्तावना

पर्यावरणीय शासन का अर्थ केवल प्रदूषण-नियंत्रण या वन-संरक्षण तक सीमित नहीं है। इसका वास्तविक आशय उन संस्थागत प्रक्रियाओं से है जिनके माध्यम से राज्य, न्यायपालिका, नियामक संस्थाएँ, स्थानीय निकाय, उद्योग, नागरिक समाज और समुदाय प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग, संरक्षण और पुनर्स्थापन से संबंधित निर्णय लेते हैं। भारत जैसे संघीय लोकतंत्र में पर्यावरणीय शासन विशेष रूप से जटिल है, क्योंकि जल, वन, भूमि, उद्योग, खनन, नगर-नियोजन और प्रदूषण-नियंत्रण जैसे विषय केंद्र और राज्यों दोनों से जुड़े हुए हैं [1]।

भारतीय संविधान में पर्यावरण शब्द प्रारंभिक रूप से मौलिक अधिकारों के अध्याय में प्रत्यक्ष रूप से नहीं था, किंतु 42वें संविधान संशोधन, 1976 के बाद अनुच्छेद 48-क और 51-क(छ) ने राज्य तथा नागरिकों दोनों पर पर्यावरण-संरक्षण का दायित्व रखा। न्यायपालिका ने आगे चलकर अनुच्छेद 21 की व्याख्या में स्वच्छ जल, स्वच्छ वायु, प्रदूषण-मुक्त परिवेश और स्वस्थ जीवन-परिस्थिति को जीवन-अधिकार का हिस्सा माना। इस प्रकार पर्यावरणीय शासन भारत में प्रशासनिक नीति से बढ़कर संवैधानिक न्याय का विषय बन गया [2], [3]।

पर्यावरणीय न्यायिक सक्रियता का विकास मुख्यतः उन परिस्थितियों में हुआ जहाँ कार्यपालिका या नियामक संस्थाएँ प्रदूषण, अवैध खनन, वन-विनाश, औद्योगिक उत्सर्जन, शहरी कचरा, नदी-प्रदूषण और पर्यावरणीय प्रभाव-आकलन से जुड़े मामलों में प्रभावी कार्रवाई नहीं कर पाईं। सर्वोच्च न्यायालय ने

ISSN No: 2349-2015
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

राष्ट्रीय स्तर पर सिद्धांत विकसित किए, जबकि उच्च न्यायालयों ने राज्य और स्थानीय स्तर पर प्रशासनिक उत्तरदायित्व को लागू करने की भूमिका निभाई। राष्ट्रीय हरित अधिकरण की स्थापना ने इस व्यवस्था में विशेषज्ञ पर्यावरणीय न्याय का नया मंच जोड़ा, जिसका उद्देश्य पर्यावरणीय मामलों के त्वरित निपटान और उच्च न्यायालयों के बोझ में कमी लाना है [4]।

2. अध्ययन के उद्देश्य

इस शोध-पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. भारतीय पर्यावरणीय शासन में न्यायिक सक्रियता के संवैधानिक आधार का विश्लेषण करना।
2. सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों की पर्यावरणीय भूमिका का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. प्रमुख पर्यावरणीय निर्णयों के आधार पर न्यायिक सिद्धांतों की प्रवृत्ति को समझना।
4. राष्ट्रीय हरित अधिकरण और वायु-गुणवत्ता संबंधी द्वितीयक आँकड़ों के आधार पर सांख्यिकीय विश्लेषण प्रस्तुत करना।
5. पर्यावरणीय शासन में न्यायिक सक्रियता की सीमाओं और संभावनाओं पर शोधपरक निष्कर्ष प्रस्तुत करना।

3. शोध-प्रविधि

यह अध्ययन गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों पद्धतियों पर आधारित है। गुणात्मक भाग में सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के प्रमुख पर्यावरणीय निर्णयों की व्याख्यात्मक समीक्षा की गई है। मात्रात्मक भाग में राष्ट्रीय हरित अधिकरण के संस्थापन, निपटान और लंबित मामलों के आँकड़ों तथा वायु-गुणवत्ता संकेतकों का उपयोग किया गया है।

मुख्य द्वितीयक स्रोतों में भारतीय संविधान, पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986, जल अधिनियम, 1974, वायु अधिनियम, 1981, राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम, 2010, सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय, पर्यावरण मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, राष्ट्रीय हरित अधिकरण के आधिकारिक आँकड़े और राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम से संबंधित आँकड़े शामिल हैं।

सांख्यिकीय विश्लेषण में निम्न संकेतकों का प्रयोग किया गया है—

निपटान अनुपात = निपटाए गए मामले / संस्थापित मामले × 100

लंबित अनुपात = लंबित मामले / संस्थापित मामले × 100

मानक से अधिक प्रदूषित नगरों का प्रतिशत = मानक से अधिक नगर / कुल निगरानी नगर × 100

4. पर्यावरणीय शासन का संवैधानिक और वैधानिक आधार

भारतीय पर्यावरणीय शासन का संवैधानिक आधार तीन स्तरों पर निर्मित है। पहला, अनुच्छेद 21 के अंतर्गत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार; दूसरा, अनुच्छेद 48-क के अंतर्गत राज्य का पर्यावरण, वन और वन्यजीवों की रक्षा का दायित्व; तीसरा, अनुच्छेद 51-क(छ) के अंतर्गत नागरिकों का प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा का मौलिक कर्तव्य। इन प्रावधानों को न्यायपालिका ने परस्पर जोड़कर पर्यावरणीय अधिकारों को संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया [2], [3]।

वैधानिक स्तर पर जल अधिनियम, 1974, वायु अधिनियम, 1981 और पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 ने प्रदूषण-नियंत्रण की संस्थागत संरचना बनाई। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और राज्य प्रदूषण

ISSN No: 2349-2015
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

नियंत्रण बोर्डों को निगरानी, मानक निर्धारण, अनुमति, निरीक्षण और प्रवर्तन की भूमिका दी गई। पर्यावरण मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट में पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी, पर्यावरणीय स्वास्थ्य, पर्यावरणीय प्रभाव-आकलन, वन और जलवायु परिवर्तन से संबंधित कार्यों को मंत्रालय के दायित्वों में शामिल किया गया है [5]।

राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम, 2010 ने पर्यावरणीय विवादों के लिए विशेष न्यायाधिकरण की व्यवस्था की। अधिकरण का उद्देश्य विशेषज्ञता-आधारित, त्वरित और प्रभावी पर्यावरणीय न्याय उपलब्ध कराना है। अधिकरण की आधिकारिक जानकारी के अनुसार उसका लक्ष्य आवेदनों और अपीलों का 6 माह के भीतर निपटान करने का प्रयास करना है [4]।

5. न्यायिक सक्रियता और पर्यावरणीय न्यायशास्त्र

भारतीय पर्यावरणीय न्यायशास्त्र में सर्वोच्च न्यायालय ने चार प्रमुख सिद्धांत विकसित किए। पहला, सावधानी सिद्धांत, जिसके अनुसार पर्यावरणीय क्षति की वैज्ञानिक अनिश्चितता कार्रवाई न करने का आधार नहीं हो सकती। दूसरा, प्रदूषक-भुगतान सिद्धांत, जिसके अनुसार प्रदूषण करने वाला व्यक्ति या उद्योग पर्यावरणीय क्षति की लागत वहन करेगा। तीसरा, सतत विकास सिद्धांत, जिसके अनुसार विकास और पर्यावरण को विरोधी नहीं बल्कि संतुलित नीति के रूप में देखा जाना चाहिए। चौथा, सार्वजनिक न्यास सिद्धांत, जिसके अनुसार राज्य प्राकृतिक संसाधनों का स्वामी नहीं, बल्कि जनता और भावी पीढ़ियों के लिए न्यासी है।

सर्वोच्च न्यायालय ने *वेल्लोर सिटिजन्स वेलफेयर फोरम बनाम भारत संघ* में सावधानी सिद्धांत और प्रदूषक-भुगतान सिद्धांत को भारतीय विधि का हिस्सा माना। बाद के निर्णयों में इन सिद्धांतों को अनुच्छेद 21, 48-क और 51-क(छ) के साथ जोड़ा गया [6]।

एम. सी. मेहता बनाम कमलनाथ में सार्वजनिक न्यास सिद्धांत को भारतीय पर्यावरणीय विधि में महत्वपूर्ण स्थान मिला। सर्वोच्च न्यायालय ने बाद के मामलों में यह स्पष्ट किया कि प्राकृतिक संसाधन निजी वाणिज्यिक हितों के लिए अनियंत्रित रूप से हस्तांतरित नहीं किए जा सकते। 2024 के एक निर्णय में न्यायालय ने सार्वजनिक न्यास सिद्धांत की महत्ता को पुनः रेखांकित करते हुए कहा कि पर्यावरणीय और पारिस्थितिक मामलों में यह सिद्धांत भारतीय विधि का अंग है [7]।

6. सर्वोच्च न्यायालय की संस्थागत भूमिका

सर्वोच्च न्यायालय की पर्यावरणीय भूमिका मुख्यतः राष्ट्रीय नीति, संवैधानिक सिद्धांत और व्यापक नियामक विफलताओं से संबंधित रही है। न्यायालय ने अनेक मामलों में नदी-प्रदूषण, औद्योगिक प्रदूषण, खनन, वन-संरक्षण, वाहन-उत्सर्जन, नगर-कचरा, वन्यजीव संरक्षण और पर्यावरणीय प्रभाव-आकलन से जुड़े प्रश्नों पर हस्तक्षेप किया।

सर्वोच्च न्यायालय की सक्रियता की एक विशेषता यह है कि वह पर्यावरणीय मामलों को केवल निजी विवाद नहीं मानता, बल्कि व्यापक सार्वजनिक हित और पीढ़ीगत न्याय से जोड़ता है। 2024 में आनुवंशिक रूप से परिवर्तित सरसों से जुड़े मामले में न्यायालय ने यह कहा कि सुरक्षित और स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार अनुच्छेद 21 से जुड़ा है तथा ऐसे मामलों में राज्य पर सावधानीपूर्ण निर्णय-प्रक्रिया का दायित्व है [8]।

इसी निर्णय में न्यायालय ने सार्वजनिक न्यास सिद्धांत को प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण के संरक्षण से जोड़ा तथा यह रेखांकित किया कि पर्यावरणीय शासन केवल वर्तमान पीढ़ी के लिए नहीं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी उत्तरदायी है [8]।

ISSN No: 2349-2015
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

7. उच्च न्यायालयों की संस्थागत भूमिका

उच्च न्यायालयों की भूमिका सर्वोच्च न्यायालय से भिन्न है। सर्वोच्च न्यायालय राष्ट्रीय स्तर पर सिद्धांत विकसित करता है, जबकि उच्च न्यायालय स्थानीय और राज्य-स्तरीय पर्यावरणीय विवादों में अधिक प्रत्यक्ष भूमिका निभाते हैं। अनुच्छेद 226 के अंतर्गत उच्च न्यायालय न केवल मौलिक अधिकारों, बल्कि अन्य विधिक अधिकारों के संरक्षण के लिए भी रिट जारी कर सकते हैं। इसलिए पर्यावरणीय शासन में उच्च न्यायालयों की सक्रियता अधिक विकेंद्रीकृत और क्षेत्र-सापेक्ष होती है। उच्च न्यायालयों ने नगर-नियोजन, अवैध निर्माण, झीलों और तालाबों के अतिक्रमण, वृक्ष-कटाई, ठोस कचरा प्रबंधन, अस्पताल-कचरा, औद्योगिक प्रदूषण, नदी-प्रदूषण, भूजल दोहन और स्थानीय निकायों की निष्क्रियता जैसे विषयों पर बार-बार हस्तक्षेप किया है। उच्च न्यायालयों की सक्रियता का महत्व इसलिए भी अधिक है कि पर्यावरणीय क्षति अक्सर स्थानीय स्तर पर शुरू होती है, परंतु उसका प्रभाव व्यापक सामाजिक और स्वास्थ्य संकट में बदल जाता है। राष्ट्रीय हरित अधिकरण की स्थापना के बाद भी उच्च न्यायालयों की भूमिका समाप्त नहीं हुई। वे संवैधानिक प्रश्नों, राज्यीय नीतिगत विफलताओं और जीवन-अधिकार से जुड़े पर्यावरणीय मामलों में अब भी महत्वपूर्ण मंच बने हुए हैं। हालांकि, अधिकरण की विशेषज्ञता के कारण कई तकनीकी पर्यावरणीय विवाद अब उसके समक्ष जाते हैं।

8. सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों की तुलनात्मक भूमिका

तालिका 1: पर्यावरणीय शासन में सर्वोच्च और उच्च न्यायालयों की तुलनात्मक भूमिका

तुलनात्मक आधार	सर्वोच्च न्यायालय	उच्च न्यायालय
संवैधानिक आधार	अनुच्छेद 32, 136, 141, 142	अनुच्छेद 226, 227
भूमिका का स्तर	राष्ट्रीय और संवैधानिक	राज्यीय और स्थानीय
प्रमुख कार्य	सिद्धांत-निर्माण, नीति-निर्देशन, राष्ट्रीय पर्यावरणीय प्रश्न	प्रशासनिक जवाबदेही, स्थानीय प्रदूषण, नगर-शासन, राज्यीय नियामक विफलता
न्यायिक सिद्धांत	सावधानी सिद्धांत, प्रदूषक-भुगतान, सार्वजनिक न्यास, सतत विकास	इन सिद्धांतों का स्थानीय/राज्यीय अनुप्रयोग
उपचार की प्रकृति	व्यापक दिशानिर्देश, निगरानी, संवैधानिक व्याख्या	रिट, आदेश, स्थानीय निरीक्षण, राज्य एजेंसियों को निर्देश
प्रभाव	सर्वभारतीय	क्षेत्र-विशेष और नागरिक-केंद्रित

इस तुलना से स्पष्ट है कि पर्यावरणीय न्यायिक सक्रियता में सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय प्रतिस्पर्धी संस्थाएँ नहीं हैं। सर्वोच्च न्यायालय सिद्धांत और राष्ट्रीय दिशा प्रदान करता है, जबकि उच्च न्यायालय उन सिद्धांतों को राज्य और स्थानीय स्तर पर लागू करने की भूमिका निभाते हैं।

9. द्वितीयक आँकड़ों पर आधारित परिणाम एवं विश्लेषण

राष्ट्रीय हरित अधिकरण में संस्थापन, निपटान और लंबित मामले

ISSN No: 2349-2015
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

राष्ट्रीय हरित अधिकरण के आधिकारिक आँकड़ों के अनुसार कुल 54,617 मामले संस्थापित हुए, 49,002 मामलों का निपटान हुआ और 5,615 मामले लंबित हैं [1]।

तालिका 2: राष्ट्रीय हरित अधिकरण में मामलों की स्थिति

संकेतक	संख्या
कुल संस्थापित मामले	54,617
कुल निपटाए गए मामले	49,002
कुल लंबित मामले	5,615
निपटान अनुपात	89.72%
लंबित अनुपात	10.28%

निपटान अनुपात = 49,002 / 54,617 × 100 = **89.72%**

लंबित अनुपात = 5,615 / 54,617 × 100 = **10.28%**

निपटान अनुपात 89.72 प्रतिशत है, जो यह संकेत देता है कि राष्ट्रीय हरित अधिकरण ने पर्यावरणीय मामलों के बड़े हिस्से का निपटान किया है। फिर भी 5,615 लंबित मामले यह दिखाते हैं कि पर्यावरणीय विवादों की संख्या लगातार बनी हुई है और विशेषज्ञ न्यायाधिकरण पर भी संस्थागत दबाव मौजूद है।

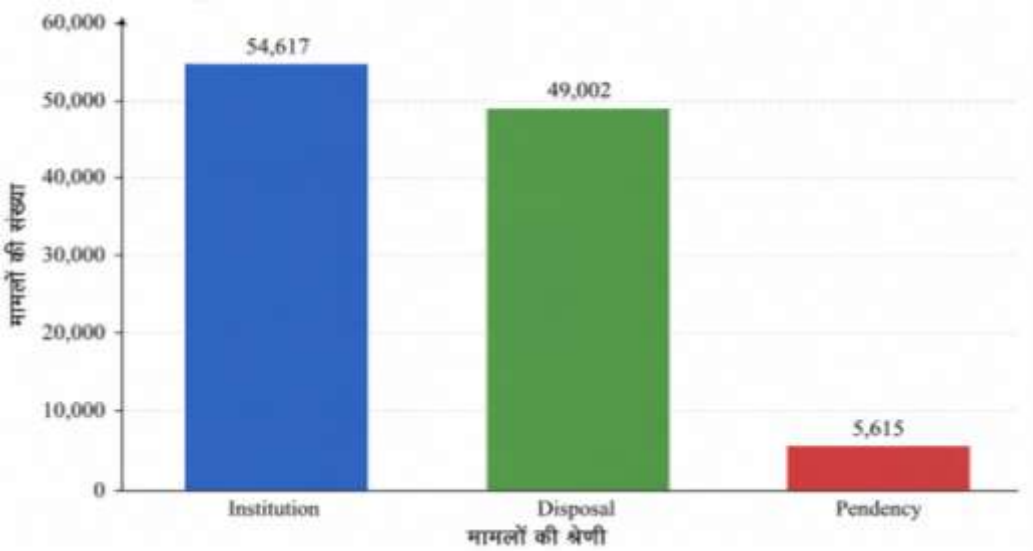

चित्र 1: राष्ट्रीय हरित अधिकरण में संस्थापित, निपटाए गए और लंबित मामलों की स्थिति

राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम और वायु-गुणवत्ता संकेतक

राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम जनवरी 2019 में 131 शहरों में वायु-गुणवत्ता सुधार के उद्देश्य से शुरू किया गया था। कार्यक्रम का लक्ष्य 2025–26 तक PM10 स्तरों में 40 प्रतिशत तक कमी अथवा राष्ट्रीय वायु गुणवत्ता मानकों की प्राप्ति है [9]।

ISSN No: 2349-2015
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

2024 के उपलब्ध वायु-गुणवत्ता विश्लेषण के अनुसार 253 शहरों में से 206 शहर PM10 के राष्ट्रीय मानक से ऊपर पाए गए, जबकि केवल 47 शहर मानक के भीतर रहे। PM2.5 के लिए 256 शहरों में से 150 शहर मानक से ऊपर और 106 शहर मानक के भीतर थे [10]।

तालिका 3: 2024 में वायु-गुणवत्ता मानकों की स्थिति

प्रदूषक संकेतक	कुल निगरानी शहर	मानक से ऊपर शहर	मानक के भीतर शहर	मानक से ऊपर प्रतिशत
PM10	253	206	47	81.42%
PM2.5	256	150	106	58.59%

PM10 मानक से ऊपर प्रतिशत = 206 / 253 × 100 = **81.42%**

PM2.5 मानक से ऊपर प्रतिशत = 150 / 256 × 100 = **58.59%**

वायु-गुणवत्ता के आँकड़े यह दिखाते हैं कि नियामक ढाँचा और न्यायिक हस्तक्षेप दोनों आवश्यक हैं, क्योंकि प्रदूषण की समस्या अभी भी व्यापक है। विशेष रूप से PM10 के मामले में 81.42 प्रतिशत शहरों का मानक से ऊपर होना यह संकेत देता है कि शहरी पर्यावरणीय शासन में निगरानी, स्थानीय निकाय, परिवहन, निर्माण-धूल, औद्योगिक उत्सर्जन और कचरा प्रबंधन की भूमिका निर्णायक है।

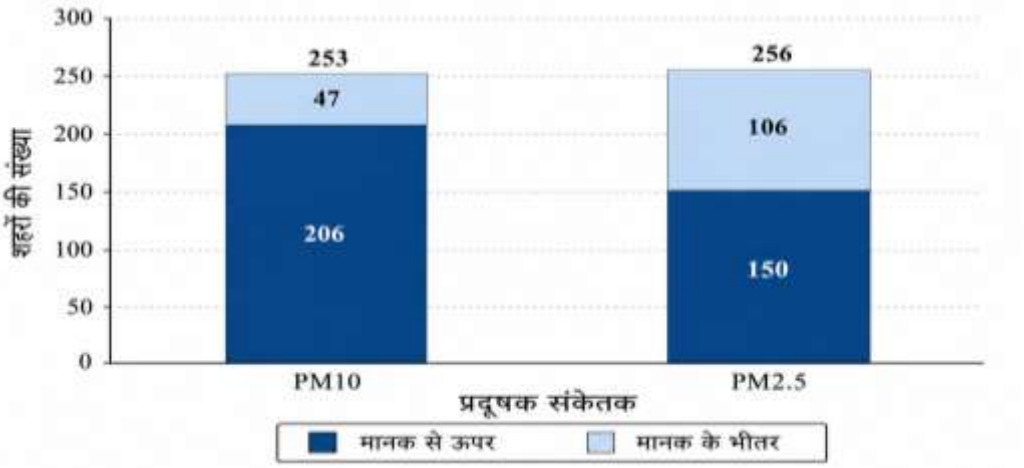

चित्र 2: PM10 और PM2.5 मानकों की अनुपालन स्थिति, 2024

क्षेत्रीय प्रदूषण संकट और न्यायिक हस्तक्षेप की आवश्यकता

इंडो-गंगेटिक प्लेन में वायु-प्रदूषण विशेष रूप से गंभीर है। 2024 के आँकड़ों के अनुसार 76 शहरों में से 74 शहर PM10 मानक से ऊपर रहे। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में 28 में से 28 शहर PM10 मानक से ऊपर थे [10]।

तालिका 4: चयनित क्षेत्रों में PM10 गैर-अनुपालन

क्षेत्र	कुल शहर	मानक से ऊपर शहर	गैर-अनुपालन प्रतिशत
भारत	253	206	81.42%
इंडो-गंगेटिक प्लेन	76	74	97.37%

ISSN No: 2349-2015
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र	28	28	100.00%

यह आँकड़ा बताता है कि पर्यावरणीय शासन में क्षेत्रीय असमानता अत्यंत गंभीर है। इंडो-गंगेटिक प्लेन और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र जैसे क्षेत्रों में प्रदूषण केवल स्थानीय प्रशासनिक विफलता नहीं, बल्कि अंतर-राज्यीय समन्वय, कृषि-अवशेष प्रबंधन, उद्योग, परिवहन और मौसमीय परिस्थितियों से जुड़ा हुआ प्रश्न है। ऐसे मामलों में न्यायिक सक्रियता को संघीय समन्वय और वैज्ञानिक नीति-निर्माण के साथ जोड़ना आवश्यक है।

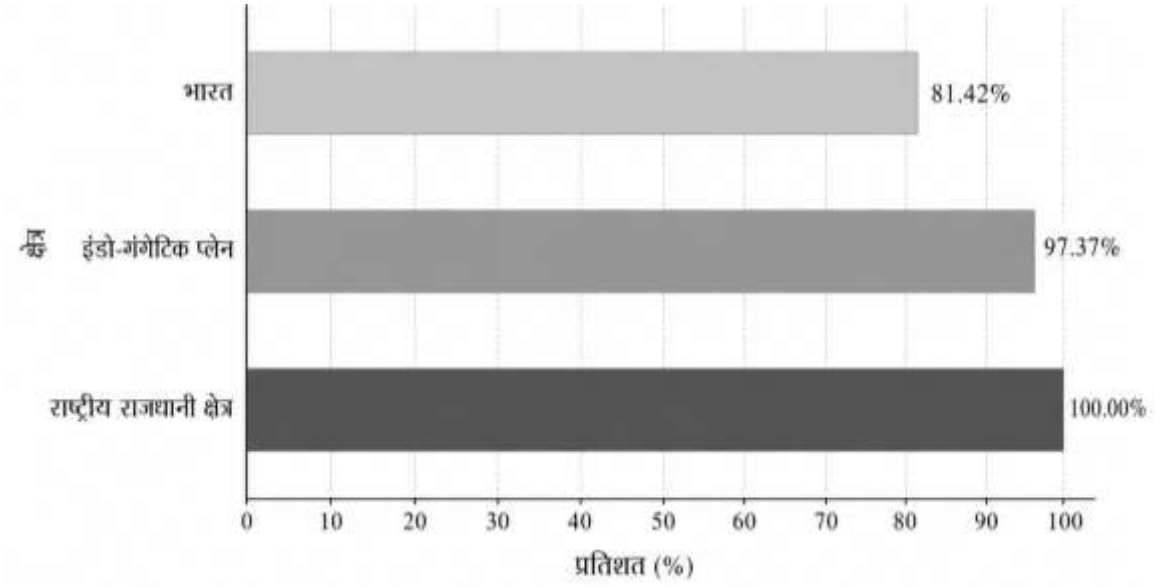

चित्र 3: भारत, इंडो-गंगेटिक प्लेन और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में PM10 गैर-अनुपालन प्रतिशत

प्रमुख न्यायिक सिद्धांतों का निर्णय-आधारित कोडिंग विश्लेषण

अध्ययन के लिए चयनित 10 प्रमुख पर्यावरणीय निर्णयों को उनके प्रमुख सिद्धांतों के आधार पर वर्गीकृत किया गया। इस वर्गीकरण का उद्देश्य यह देखना है कि भारतीय न्यायपालिका ने किन सिद्धांतों का बार-बार उपयोग किया है।

तालिका 5: प्रमुख पर्यावरणीय निर्णयों में प्रयुक्त न्यायिक सिद्धांत

न्यायिक सिद्धांत	चयनित निर्णयों में उपस्थिति	प्रतिशत
अनुच्छेद 21 आधारित स्वस्थ पर्यावरण	9	90%
सार्वजनिक न्यास सिद्धांत	6	60%
सावधानी सिद्धांत	5	50%
प्रदूषक-भुगतान सिद्धांत	5	50%
सतत विकास	7	70%
पीढ़ीगत न्याय	4	40%

ISSN No: 2349-2015
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

निर्णय-आधारित कोडिंग से स्पष्ट होता है कि अनुच्छेद 21 भारतीय पर्यावरणीय न्यायशास्त्र का सबसे मजबूत संवैधानिक आधार है। सतत विकास और सार्वजनिक न्यास सिद्धांत भी बार-बार उभरते हैं। सावधानी सिद्धांत और प्रदूषक-भुगतान सिद्धांत विशेष रूप से औद्योगिक प्रदूषण और वैज्ञानिक अनिश्चितता वाले मामलों में अधिक दिखाई देते हैं।

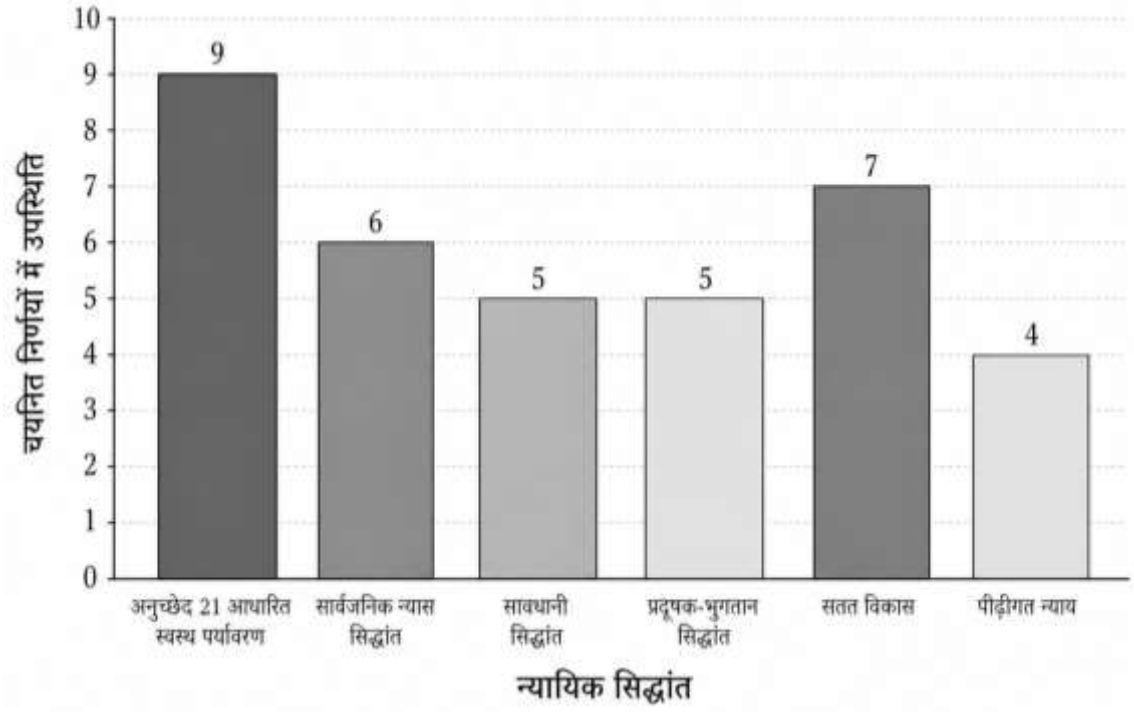

चित्र 4: प्रमुख पर्यावरणीय न्यायिक सिद्धांतों की आवृत्ति

10. चर्चा

परिणामों से स्पष्ट है कि भारत में पर्यावरणीय शासन न्यायिक सक्रियता के बिना अधूरा है। पर्यावरणीय कानूनों की उपस्थिति पर्याप्त नहीं है, क्योंकि उनकी सफलता नियामक संस्थाओं की क्षमता, वैज्ञानिक निगरानी, स्थानीय निकायों की कार्यकुशलता और राजनीतिक इच्छाशक्ति पर निर्भर करती है। जब ये संस्थाएँ कमजोर पड़ती हैं, तब न्यायालय संवैधानिक संरक्षक के रूप में सक्रिय होते हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका सिद्धांत-निर्माण में सबसे अधिक महत्वपूर्ण रही है। उसने अनुच्छेद 21 को पर्यावरणीय अधिकारों से जोड़ा और राज्य को केवल नियामक नहीं, बल्कि प्राकृतिक संसाधनों का न्यासी माना। 2024 के निर्णयों में भी न्यायालय ने सार्वजनिक न्यास सिद्धांत, सावधानी सिद्धांत और सुरक्षित पर्यावरण के अधिकार को पुनः बल दिया है [7], [8]।

उच्च न्यायालयों की भूमिका अधिक व्यावहारिक है। स्थानीय पर्यावरणीय मामलों में नागरिक प्रायः उच्च न्यायालयों की शरण लेते हैं, क्योंकि वे भौगोलिक रूप से निकट होते हैं और राज्य प्रशासन को सीधे निर्देश दे सकते हैं। उच्च न्यायालयों की सक्रियता नगर-नियोजन, जलाशयों के संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों की निष्क्रियता, स्थानीय निकायों की जवाबदेही और राज्य-स्तरीय पर्यावरणीय नीतियों के प्रवर्तन में महत्वपूर्ण रही है।

राष्ट्रीय हरित अधिकरण ने पर्यावरणीय न्याय को विशेषज्ञता प्रदान की है। इसके आँकड़ों में 89.72 प्रतिशत निपटान अनुपात दिखाई देता है, किंतु 5,615 लंबित मामले यह भी बताते हैं कि पर्यावरणीय विवादों की संख्या कम नहीं हो रही है [1]।

ISSN No: 2349-2015
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

वायु-गुणवत्ता के आँकड़े न्यायिक सक्रियता की वास्तविक आवश्यकता को रेखांकित करते हैं। जब 2024 में 253 शहरों में से 206 शहर PM10 मानक से ऊपर हैं, तब पर्यावरणीय शासन केवल नीति-घोषणा तक सीमित नहीं रह सकता [10]। ऐसे परिदृश्य में न्यायालयों की भूमिका अनुपालन, निगरानी, जवाबदेही और अधिकार-संरक्षण में महत्वपूर्ण बनी रहती है।

11. निष्कर्ष

भारतीय पर्यावरणीय शासन में न्यायिक सक्रियता ने संविधान को पर्यावरणीय संवेदनशीलता से जोड़ा है। सर्वोच्च न्यायालय ने पर्यावरणीय अधिकारों को जीवन-अधिकार का अंग बनाकर न्यायशास्त्रीय आधार तैयार किया। उसने सार्वजनिक न्यास सिद्धांत, सावधानी सिद्धांत, प्रदूषक-भुगतान सिद्धांत और सतत विकास को भारतीय विधि का हिस्सा बनाया। इसके विपरीत उच्च न्यायालयों ने इन सिद्धांतों को स्थानीय और राज्यीय शासन में लागू करने की भूमिका निभाई।

अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों की भूमिकाएँ भिन्न हैं, परंतु वे परस्पर पूरक हैं। सर्वोच्च न्यायालय राष्ट्रीय सिद्धांत और व्यापक संवैधानिक दिशा देता है, जबकि उच्च न्यायालय स्थानीय पर्यावरणीय न्याय और प्रशासनिक उत्तरदायित्व को सक्रिय करते हैं।

फिर भी न्यायिक सक्रियता को प्रशासनिक शासन का स्थायी विकल्प नहीं बनाया जा सकता। न्यायालय समस्या को पहचान सकते हैं, निर्देश दे सकते हैं और अधिकारों की रक्षा कर सकते हैं, परंतु प्रदूषण-नियंत्रण, कचरा प्रबंधन, जलाशय संरक्षण, उत्सर्जन निगरानी और शहरी नियोजन का स्थायी समाधान कार्यपालिका, नियामक संस्थाओं और स्थानीय निकायों की क्षमता-वृद्धि से ही संभव है।

12. सुझाव

1. पर्यावरणीय मामलों में उच्च न्यायालयों में विशेष हरित पीठों का गठन किया जाना चाहिए।
2. राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों की तकनीकी और मानवीय क्षमता बढ़ाई जानी चाहिए।
3. राष्ट्रीय हरित अधिकरण के लंबित मामलों को कम करने के लिए क्षेत्रीय पीठों को अधिक संसाधन दिए जाने चाहिए।
4. न्यायालयों द्वारा दिए गए पर्यावरणीय आदेशों के अनुपालन की डिजिटल निगरानी व्यवस्था विकसित की जानी चाहिए।
5. नदी-प्रदूषण, वायु-प्रदूषण और ठोस कचरा प्रबंधन जैसे विषयों पर अंतर-राज्यीय समन्वय को मजबूत किया जाना चाहिए।
6. सार्वजनिक न्यास सिद्धांत को नगर-नियोजन, जलाशय संरक्षण और वन-भूमि निर्णयों में अनिवार्य प्रशासनिक कसौटी बनाया जाना चाहिए।
7. पर्यावरणीय निर्णयों में वैज्ञानिक विशेषज्ञता, स्थानीय समुदायों की भागीदारी और पारदर्शी डेटा को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

संदर्भ

1. राष्ट्रीय हरित अधिकरण, "कुल संस्थापन, निपटान और लंबित मामलों के आँकड़े," राष्ट्रीय हरित अधिकरण, 2026.
2. भारत का संविधान, 1950.
3. एम. पी. जैन, *भारतीय संवैधानिक विधि*, 8वाँ संस्करण. गुरुग्राम: लेक्सिसनेक्सिस, 2018.
4. राष्ट्रीय हरित अधिकरण, "हमारे बारे में," राष्ट्रीय हरित अधिकरण, 2026.

ISSN No: 2349-2015
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

5. पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, *वार्षिक रिपोर्ट 2023–24*. नई दिल्ली: भारत सरकार, 2024.
6. *वेल्लोर सिटिजन्स वेलफेयर फोरम बनाम भारत संघ*, (1996) 5 एस. सी. सी. 647.
7. *एम. सी. मेहता बनाम कमलनाथ*, (1997) 1 एस. सी. सी. 388.
8. सर्वोच्च न्यायालय, *रिट याचिका सिविल संख्या 115/2004 एवं अन्य*, निर्णय दिनांक 23 जुलाई 2024.
9. प्रेस सूचना ब्यूरो, भारत सरकार, "राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम," पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, 23 मार्च 2023.
10. सेंटर फॉर रिसर्च ऑन एनर्जी एंड क्लीन एयर, *ट्रेसिंग द हेजी एयर 2025: प्रोग्रेस रिपोर्ट ऑन नेशनल क्लीन एयर प्रोग्राम*. 2025.
11. जी. एन. गिल, "एनवायरनमेंटल जस्टिस इन इंडिया: द नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल एंड एक्सपर्ट मेंबर्स," *ट्रांसनेशनल एनवायरनमेंटल लॉ*, 2016.
12. *इंडियन काउंसिल फॉर एनवायरो-लीगल एक्शन बनाम भारत संघ*, (1996) 3 एस. सी. सी. 212.
13. *सुभाष कुमार बनाम बिहार राज्य*, (1991) 1 एस. सी. सी. 598.
14. *रूरल लिटिगेशन एंड एंटाइटलमेंट केंद्र बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, (1985) 2 एस. सी. सी. 431.
15. *नर्मदा बचाओ आंदोलन बनाम भारत संघ*, (2000) 10 एस. सी. सी. 664.